महात्मा गाँधी के अनुसार स्वस्थ रहने के लिए मनुष्य की खुराक कैसी हो?

शोभा अग्रवाल "चिलबिल"
लखनऊ (उत्तर प्रदेश)

गाँधी जी कहते हैं

'हवा और पानी के बिना आदमी जिन्दा ही नहीं रह सकता, यह बात सच है। मगर जीवन को टिकाने वाली चीज तो खुराक ही है, अन्न मनुष्य का प्राण है। खुराक तीन प्रकार की होती है–माँसाहार, शाकाहार और मिश्राहार। असंख्य लोग मिश्राहारी हैं। 'माँस' में मछली और पक्षी भी आ जाते हैं। दूध को हम किसी भी तरह शाकाहार में नहीं गिन सकते। सच पूछा जाए तो वह माँस का ही एक रूप है। मगर लौकिक भाषा में वह माँसाहार में नहीं गिना जाता। जो गुण माँस में हैं वे अधिकांश दूध में भी हैं। डॉक्टरी भाषा में वह प्राणि खुराक–एनिमल फूड–माना जाता है।–––––––डॉक्टरी मत का झुकाव मुख्यतः मिश्राहार की ओर है। मगर पश्चिम में डॉक्टरों का एक बड़ा समुदाय ऐसा है, जिसका यह दृढ़ मत है कि मनुष्य के शरीर की रचना को देखते हुए वह शाकाहारी ही लगता है। उसके दाँत, आमाशय इत्यादि उसे शाकाहारी सिद्ध करते हैं। शाकाहार में फलों का समावेश होता है। फलों में ताजे फल और सूखे मेवे अर्थात् बादाम, पिस्ता, अखरोट, चिलगोजा इत्यादि आ जाते हैं।

दूध की आवश्यकता

खेड़ा जिले में (फौज में) सिपाहियों की भर्ती का काम करते–करते मैं भोजन में अपनी भूल के कारण मृत्युशय्या पर पड़ गया। दूध के बिना जीने के लिए मैंने बहुत हाथ–पैर मारे। जिन वैद्यों, डॉक्टरों और रसायनशास्त्रियों को मैं जानता था, उनकी मदद मैंने माँगी। किसी ने मूँग के पानी का, किसी ने महुए के तेल का और किसी ने बादाम के दूध का सुझाव दिया। इन सब चीजों के प्रयोग करते–करते मैंने शरीर को निचोड़ डाला, पर उनसे मैं बिछौना छोड़कर उठ न सका।

गाय–भैंस का दूध तो मैं ले ही नहीं सकता था। यह मेरा व्रत था। व्रत का हेतु तो दूध मात्र का त्याग था। पर व्रत लेते समय मेरे सामने गोमाता और भैंस माता ही थीं। इस कारण से तथा जीने की आशा से मैंने मन को जैसे–तैसे फुसला लिया। मैंने व्रत के अक्षर का पालन किया और बकरी का दूध लेने का निश्चय किया। बकरी माता का दूध लेते समय भी मैंने यह अनुभव किया कि मेरे व्रत की आत्मा का हनन हुआ है।

आरोग्य–विषयक मेरी पुस्तक के सहारे प्रयोग करने वाले सब भाई–बहनों को मैं सावधान करना चाहता हूँ। दूध का त्याग पूरी तरह लाभप्रद प्रतीत हो अथवा अनुभवी वैद्य–डॉक्टर उसे छोड़ने की सलाह दें तभी वे उसको छोड़ें, सिर्फ मेरी पुस्तक के भरोसे वे दूध का त्याग न करें। यहाँ का मेरा अनुभव अब तक तो मुझे यही बतलाता है कि जिसकी जठराग्नि मंद हो गई है और जिसने बिछौना पकड़ लिया है, उसके लिए दूध जैसी दूसरी हल्की और पोषक खुराक है ही नहीं।'

आत्मकथा पृष्ठ 234 एवं 235

'मैं शाकाहार का पक्षपाती हूँ। मगर अनुभव से मुझे यह स्वीकार करना पड़ा है कि दूध और दूध से बनने वाले पदार्थ जैसे मक्खन, दही वगैरह के बिना मनुष्य–शरीर पूरी तरह टिक नहीं सकता। मेरे विचारों में यह महत्त्व का परिवर्तन हुआ है। मैंने दूध–घी के बगैर छह वर्ष निकाले हैं। उस वक्त मेरी शक्ति में किसी तरह की कमी नहीं आयी थी। मगर अपनी मूर्खता के कारण मैं 1917 में सख्त पेचिश का शिकार बना। शरीर हाड़पिंजर हो गया। मैंने हठपूर्वक दवा नहीं ली; और उतने ही हठ से दूध या छाछ भी लेने से इन्कार किया। शरीर किसी तरह बनता ही नहीं था। मैंने दूध न

लेने का व्रत लिया था। मगर डॉक्टर कहने लगा–'यह व्रत तो आपने गाय और भैंस के दूध को नजर में रखकर लिया था। बकरी का दूध लेने में आपको कोई हर्ज नहीं होना चाहिये।

मेरी धर्मपत्नी ने डॉक्टर का समर्थन किया और मैं पिघला। सच कहा जाए तो जिसने गाय–भैंस के दूध का त्याग किया है, उसे बकरी वगैरह का दूध लेने की छूट नहीं होनी चाहिये क्योंकि उस दूध में भी पदार्थ तो वही होते हैं। सिर्फ मात्रा का ही फर्क होता है। इसलिए मेरे व्रत के केवल अक्षरों का ही पालन हुआ है, उसकी आत्मा का नहीं।

जो भी हो, बकरी का दूध तुरन्त आया और मैंने वह लिया। लेते ही मुझमें एक नई चेतना आई, शरीर में शक्ति आयी और मैं खाट से उठा। इस अनुभव से और ऐसे दूसरे अनेक अनुभवों से मैं लाचार होकर दूध का पक्षपाती बना हूँ। मगर मेरा यह दृढ़ मत है कि असंख्य वनस्पतियों में कोई न कोई ऐसी जरूर होगी, जो दूध और माँस की आवश्यकता अच्छी तरह पूरी कर सके और उनके दोषों से मुक्त हो।

मेरी दृष्टि से दूध और माँस लेने में दोष तो है ही। माँस के लिए हम पशु–पक्षियों का नाश करते हैं; और माँ के दूध के सिवा दूसरा दूध पीने का हमें अधिकार नहीं है। नैतिक दोष के सिवा केवल आरोग्य की दृष्टि से भी इनमें दोष हैं। ——— पालतू पशु सामान्यतः पूरे तन्दुरुस्त नहीं होते। मनुष्य की तरह पशुओं में भी अनेक रोग होते हैं। अनेक परीक्षायें करने के बाद भी कई रोग परीक्षक की नजर से छूट जाते हैं। सब पशुओं की अच्छी तरह परीक्षा करवाना असंभव लगता है। मेरे पास एक गोशाला है। उसके लिए मित्रों की मदद आसानी से मिल जाती है परन्तु मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि मेरी गोशाला में सब पशु निरोगी ही हैं। इससे उलटे यह देखने में आया है कि जो गाय निरोगी मानी जाती थी वह अन्त में रोगी सिद्ध हुई। इसका पता चलने से पहले तो उस रोगी गाय के दूध का उपयोग होता ही रहता था।

सेवाग्राम–आश्रम आसपास के किसानों से भी दूध लेता है। उनके पशुओं की परीक्षा कौन करता है? उनका दूध निर्दोष है या नहीं, इसकी परीक्षा करना कठिन है। इसलिए दूध उबालने से जितना निर्दोष बन सके उससे ही काम चलाना होगा। जो बात दूध देने वाले पशुओं के लिए है वह माँस के लिए कत्ल होने वाले पशुओं के लिए तो है ही परन्तु अधिकतर तो हमारा काम भगवान भरोसे से ही चलता है। मनुष्य अपने आरोग्य की बहुत चिंता नहीं रखता। उसने अपने लिए वैद्यों, डॉक्टरों और नीम–हकीमों की संरक्षक फौज खड़ी कर रखी है, और उसके बल पर वह अपने–आपको सुरक्षित मानता है। उसे सबसे अधिक चिंता रहती है धन और प्रतिष्ठा वगैरह प्राप्त करने की। यह चिंता दूसरी सब चिंताओं को हजम कर जाती है। इसलिए जब तक कोई पारमार्थिक डॉक्टर, वैद्य या हकीम लगन से परिश्रम करके संपूर्ण गुणों वाली कोई वनस्पति नहीं ढूँढ़ निकालता, तब तक मनुष्य दुग्धाहार या माँसाहार करता ही रहेगा।

अब जरा युक्ताहार के बारे में विचार करें। मनुष्य–शरीर को स्नायु बनाने वाले, गर्मी देने वाले, चर्बी बढ़ाने वाले, क्षार देने वाले और मल निकालने वाले द्रव्यों की आवश्यकता रहती है। स्नायु बनाने वाले द्रव्य दूध, माँस, दालों और सूखे मेवों से मिलते हैं। दूध और माँस से मिलने वाले द्रव्य दालों वगैरह की अपेक्षा अधिक आसानी से पच जाते हैं और सर्वांश में वे अधिक लाभदायक हैं। दूध और माँस में दूध का दर्जा ऊपर है। डॉक्टर लोग कहते हैं कि जब माँस नहीं पचता, तब भी दूध पच जाता है। जो लोग माँस नहीं खाते, उन्हें तो दूध से बहुत मदद मिलती है।'

अनाज

प्राकृतिक भोजन एवं शाकाहार दूध के सिवा दूसरे पदार्थों की शरीर को आवश्यकता रहती है। दूध से दूसरे दर्जे पर गेहूँ, बाजरा, जुआर, चावल वगैरह अनाज रखे जा सकते हैं। हिन्दुस्तान के अलग–अलग प्रांतों में अलग–अलग किस्म के अनाज पाये जाते हैं। कई जगहों पर केवल स्वाद

के खातिर एक ही गुण वाले एक से अधिक अनाज खाये जाते हैं। जैसे कि गेहूँ, बाजरा और चावल तीनों चीजें थोड़ी–थोड़ी मात्रा में एक साथ खायी जाती हैं। शरीर के पोषण के लिए इस मिश्रण की आवश्यकता नहीं है। इससे खुराक की मात्रा पर अंकुश नहीं रहता और आमाशय का काम अधिक बढ़ जाता है। एक समय में एक ही तरह का अनाज खाना ठीक माना जाएगा। इन अनाजों में से मुख्यतः स्टार्च मिलता है। गेहूँ सब अनाजों का राजा है।

अनाज मात्रा को अच्छी तरह साफ करके हाथ–चक्की में पीसकर बिना छाने इस्तेमाल करना चाहिये। अनाज की भूसी में सत्त्व और क्षार भी रहते हैं। दोनों बड़े उपयोगी पदार्थ हैं। इसके उपरान्त भूसी में एक ऐसा पदार्थ होता है, जो बगैर पचे ही निकल जाता है और अपने साथ मल को भी निकलता है। चावल का दाना नाजुक होने के कारण ईश्वर ने उसके ऊपर छिलका बनाया है, जो खाने के काम का नहीं होता। इसलिए चावल को कूटना पड़ता है। कुटाई उतनी ही करनी चाहिये जिससे ऊपर का छिलका निकल जाए। मशीन में चावल के छिलके के अलावा उसकी भूसी भी बिलकुल निकाल दी जाती है। इसका कारण यह है कि चावल की भूसी में बहुत मिठास रहती है; इसलिए अगर भूसी रखी जाए तो उसमें सुसरी या कीड़ा पड़ जाता है। गेहूँ और चावल की भूसी निकाल दें, तो बाकी केवल स्टार्च रह जाता है; और भूसी में अनाज का बहुत कीमती हिस्सा चला जाता है। गेहूँ और चावल की भूसी को अकेला पका कर भी खाया जा सकता है। उसकी रोटी भी बन सकती है। कोकणी चावलों का तो आटा पीसकर उसकी रोटी ही गरीब लोग खाते हैं। पूरे चावल पकाकर खाने की अपेक्षा चावल के आटे की रोटी शायद अधिक आसानी से पचती हो और थोड़ी खाने से पूरा सन्तोष भी दे।

हम लोगों को दाल या शाक के साथ रोटी खाने की आदत है। इससे रोटी पूरी तरह चबायी नहीं जाती। स्टार्च वाले पदार्थों को जितना हम चबायें और जितने वे लार के साथ मिलें उतना ही अच्छा है। यह लार स्टार्च के पचने में मदद करती है। अगर खुराक को बिना चबाये हम निगल जाएँ, तो उसके पचने में लार की मदद नहीं मिल सकती। इसलिए खुराक को उसी स्थिति में खाना कि जिससे उसे चबाना पड़े, अधिक लाभदायक है।

स्टार्च–प्रधान अनाजों के बाद स्नायु बाँधने वाली (प्रोटीन प्रधान) दालों इत्यादि को दूसरा स्थान दिया जाता है। दाल के बिना खुराक को सब लोग अपूर्ण मानते हैं। माँसाहारी को भी दाल तो चाहिये ही। जिस आदमी को मेहनत–मजदूरी करनी पड़ती है और जिसे पूरी मात्रा में बिलकुल दूध नहीं मिलता। उसका गुजारा दाल के बिना न चले यह मैं समझ सकता हूँ। मगर मुझे यह कहने में जरा भी संकोच नहीं होता कि जिन्हें शारीरिक काम कम करना पड़ता है–जैसे कि क्लर्क, व्यापारी, वकील, डॉक्टर या शिक्षक और जिन्हें दूध पूरी मात्रा में मिल जाता है, उन्हें दाल की आवश्यकता नहीं है। सामान्यतः दाल भारी खुराक मानी जाती है और स्टार्च–प्रधान अनाज की अपेक्षा बहुत कम मात्रा में खायी जाती है। दालों में मटर और लोबिया बहुत भारी हैं। मूँग और मसूर हल्के माने जाते हैं।

शाक, भाजी और फल

तीसरा दर्जा शाक–भाजी को और फलों को देना चाहिये। शाक और फल हिन्दुस्तान में सस्ते होने चाहिये, मगर ऐसा नहीं है। वे केवल शहरियों की खुराक माने जाते हैं। कई गाँवों में हरी तरकारी भाग्य से ही मिलती है और बहुत जगह फल भी नहीं मिलते। इस खुराक की कमी हिन्दुस्तान के लिए बड़ी शर्म की बात है। देहाती चाहें तो काफी शाक–भाजी पैदा कर सकते हैं। फलों के पेड़ों के बारे में कठिनाई जरूर है, क्योंकि जमीन की काश्त के कानून सख्त और गरीबों को दबाने वाले हैं। मगर यह तो हमारे विषय से बाहर की बात हुई।

ताजी शाक–भाजी में पत्तोंवाली जो भी भाजी मिले वह काफी मात्रा में हर रोज लेनी चाहिये। जो शाक स्टार्च–प्रधान हैं, उनकी गिनती यहाँ मैंने शाक–भाजी में नहीं की है। आलू, शकरकंद, स्तालू और जमीकन्द स्टार्च– प्रधान शाक हैं। उन्हें अनाज की पदवी देनी चाहिये। दूसरे कम स्टार्च

वाले शाक काफी मात्रा में लेने चाहिए। ककड़ी, लूनो की भाजी, सरसों का साग, सोए की भाजी, टमाटर इत्यादि को पकाने की कोई आवश्यकता नहीं रहती। उन्हें साफ करके और अच्छी तरह धोकर थोड़ी मात्रा में कच्चा खाना चाहिये।

फलों में मौसम के जो फल मिल सकें वे लेने चाहिये। आम के मौसम में आम, जामुन, इसी तरह अमरूद, पपीता, संतरा, अंगूर, मीठे नींबू (शरबती या स्वीट लाइम), मोसम्बी वगैरह फलों का ठीक–ठीक उपयोग करना चाहिये। फल खाने का सबसे अच्छा वक्त सुबह का है। सबेरे दूध और फल का नाश्ता करने से पूरा संतोष मिल जाता है। जो लोग खाना जल्दी खाते हैं, उन के लिए तो सबेरे केवल फल ही खाना अच्छा है।

केला अच्छा फल है। मगर उसमें स्टार्च बहुत है। इसलिए वह रोटी की जगह लेता है। केला, दूध और भाजी संपूर्ण खुराक है।

घी तेल

मनुष्य की खुराक में थोड़ी–बहुत चिकनाई की आवश्यकता रहती है। वह घी और तेल से मिल जाती है। घी मिल सके तो तेल की कोई आवश्यकता नहीं रहती। तेल पचने में भारी होते हैं और शुद्ध घी के बराबर गुणकारी नहीं होते। दूध में घी आ ही जाता है। इसलिए जिसे घी न मिल सके, वह तेल खाकर चर्बी की मात्रा पूरी कर सकता है। तेलों में तिल का, नारियल का और मूँगफली का तेल अच्छा माना जाता है। तेल ताजा होना चाहिये। इसलिए देशी घानी का तेल मिल सके तो अच्छा है। जो घी और तेल आज बाजार में मिलता है, वह लगभग निकम्मा होता है। यह दुःख की और शर्म की बात है। मगर जब तक व्यापार में कानून या लोक शिक्षण द्वारा ईमानदारी दाखिल नहीं होती, तब तक लोगों को सावधान रखकर, मेहनत करके अच्छी और शुद्ध चीजें प्राप्त करनी होंगी। अच्छी और शुद्ध चीज के बदले कैसी भी चीज मिले तो उससे कभी संतोष नहीं मानना चाहिये। बनावटी घी या खराब तेल खाने के बदले घी–तेल के बगैर गुजारा करने का निश्चय ज्यादा पसन्द करने योग्य है।

गुड़ और खाँड

जैसे खुराक में चिकनाई की आवश्यकता रहती है, वैसे ही गुड़ और खाँड की भी। मीठे फलों से काफी मिठास मिल जाती है, तो भी तीन तोला गुड़ या खाँड लेने में कोई हानि नहीं है। मीठे फल न मिलें तो गुड़ और खाँड लेने की आवश्यकता रहती है। मगर आजकल मिठाई पर जो इतना जोर दिया जाता है, वह ठीक नहीं है। शहरों में रहनेवाले बहुत ज्यादा मिठाई खाते हैं, जैसे कि खीर, रबड़ी, श्रीखंड, पेड़ा, बर्फी, जलेबी वगैरह मिठाइयाँ। ये सब अनावश्यक हैं और अधिक मात्रा में खाने से नुकसान ही करती हैं। जिस देश में करोड़ों लोगों को पेटभर अन्न भी नहीं मिलता, वहाँ जो लोग पकवान खाते हैं, वे चोरी का माल खाते हैं, यह कहने में मुझे तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं लगती।

जो मिठाई के बारे में कहा गया है, वह घी–तेल को भी लागू होता है। घी–तेल में तली हुई चीजें खाना बिलकुल जरूरी नहीं है। पूरी, लड्डू वगैरह बनाने में घी खर्च करना अविचारीपन है। जिन्हें आदत नहीं होती, वे लोग तो ये चीजें खा ही नहीं सकते। अंग्रेज जब हमारे देश में आते हैं, तब हमारी मिठाइयाँ और घी में पकाई हुई चीजें वे खा ही नहीं सकते। जो खाते हैं वे बीमार पड़ते हैं, यह मैंने कई बार देखा है। स्वाद तो सिर्फ आदत की बात है। भूख जो स्वाद पैदा करती है, वह छप्पन भोगों में भी नहीं मिलता। भूखा मनुष्य सूखी रोटी भी बहुत स्वाद से खायेगा। जिसका पेट भरा हुआ है, वह अच्छे से अच्छा माना जानेवाला पकवान भी नहीं खा सकेगा।

मसाले

खुराक का विवेचन करते समय मैंने मसालों के बारे में कुछ नहीं कहा। नमक को हम मसालों का राजा कह सकते हैं, क्योंकि नमक के बिना सामान्य मनुष्य कुछ खा ही नहीं सकता। इसलिए नमक को 'सबरस' भी कहा गया है। शरीर को कई क्षारों की आवश्यकता रहती है। उनमें से नमक भी एक है। ये सब क्षार खुराक में होते ही हैं। मगर उसे अशास्त्रीय तरीके से पकाने के कारण कुछ क्षारों की मात्रा कम हो जाती है, इसलिए वे ऊपर से लेने पड़ते हैं। ऐसा ही एक अत्यन्त आवश्यक क्षार नमक है। इसलिए उसे थोड़े प्रमाण में ले सकते हैं।

मगर कई ऐसे मसाले, जिनकी शरीर को सामान्यतः कोई आवश्यकता नहीं होती, केवल स्वाद के खातिर या पाचन–शक्ति बढ़ाने के खातिर लिये जाते हैं, जैसे– हरी या सूखी लाल मिर्च, काली मिर्च, हल्दी, धनिया, जीरा, राई, मेथी, हींग इत्यादि। इनके विषय में पचास वर्ष के निजी अनुभव से मेरी यह राय बनी है कि शरीर को पूरी तरह निरोग रखने के लिए इनमें से एक की भी आवश्यकता नहीं है। जिसकी पाचन–शक्ति बिलकुल कमजोर हो गई है, उसे केवल औषधि के रूप में, अमुक समय के लिए, निश्चित मात्रा में मसाले लेने पड़ें तो वह भले ले। मगर स्वाद के खातिर तो ऐसी चीज का आग्रहपूर्वक निषेध ही मानना चाहिये। हर प्रकार का मसाला, यहाँ तक कि नमक भी, अनाज और शाक के स्वाभाविक रस का नाश करता है। जिस आदमी की जीभ बिगड़ नहीं गई है, उसे स्वाभाविक रस में जो स्वाद आता है, वह मसाला या नमक डालने के बाद नहीं आता। इसीलिए मैंने सूचना की है कि नमक लेना हो तो ऊपर से लिया जाए। मिर्च तो पेट और मुँह को जलाती है। जिसे मिर्च खाने की आदत नहीं होती, वह शुरू में तो उसे खा ही नहीं सकता। मैंने देखा है कि मिर्च खाने से कई लोगों का मुँह आ जाता है। एक आदमी जिसे मिर्च खाने का बहुत शौक था, अपनी भरी जवानी में इसी कारण मृत्यु का शिकार भी बना था।

दक्षिण अफ्रीका के हबशी तो मिर्च को छू भी नहीं सकते। खुराक में हल्दी का रंग वे बरदाश्त ही नहीं कर सकते। अंग्रेज भी हमारे मसाले नहीं खाते, हिन्दुस्तान में आने के बाद उन्हें आदत पड़ जाए तो बात अलग है।

आहार कितना व कब

अब हम यह विचार करें कि हमें कितना खाना चाहिये और कितनी बार खाना चाहिये। सब खुराक औषधि के रूप में लेनी चाहिये, स्वाद के खातिर हरगिज नहीं। स्वाद मात्र रस में होता है और रस भूख में होता है। पेट क्या चाहता है, इसका पता बहुत कम लोगों को रहता है। कारण यह है कि हमें गलत आदतें पड़ गई हैं।

जन्मदाता माता–पिता कोई त्यागी और संयमी नहीं होते। उनकी आदतें थोड़े–बहुत प्रमाण में बच्चों में भी उतरती हैं। गर्भाधान के बाद माता जो खाती है, उसका असर बालक पर पड़ता ही है। फिर बाल्यावस्था में माता बच्चे को अनेक स्वाद खिलाती है। जो कुछ वह स्वयं खाती है उसमें से बच्चे को भी खिलाती है। परिणाम यह होता है कि बचपन से ही पेट को बुरी आदतें पड़ जाती हैं। पड़ी हुई आदतों को मिटा सकने वाले विचारशील लोग थोड़े ही होते हैं। मगर जब मनुष्य को यह भान होता है कि वह अपने शरीर का संरक्षक है और उसने शरीर को सेवा के लिए अर्पण कर दिया है। तब शरीर को स्वस्थ रखने के नियम जानने की उसे इच्छा होती है और उन नियमों का पालन करने का वह महाप्रयास करता है।

बुद्धिजीवी मनुष्य के लिए चौबीस घंटे में खुराक का नीचे लिखा परिमाण उचित माना जा सकता है–

1. गाय का दूध दो पौंड।
2. अनाज छह औंस अर्थात् 15 तोला (चावल, गेहूँ, बाजरा इत्यादि मिलाकर)।
3. शाक में पत्ता–भाजी तीन औस और दूसरे शाक पाँच औंस।

4. कच्चा शाक एक औंस।

6. गुड़ या शक्कर तीन तोले।

7. ताजे फल, जो मिल सकें, रुचि और आर्थिक शक्ति के अनुसार।

हर रोज दो नींबू लिये जाएँ तो अच्छा है। नींबू का रस निकालकर भाजी के साथ या पानी के साथ लेने से खटाई का दाँतों पर खराब असर नहीं पड़ेगा।

ये सब वजन कच्चे अर्थात् बिना पकाये हुए पदार्थों के हैं। नमक का प्रमाण यहाँ नहीं दिया गया है। वह रुचि के अनुसार ऊपर से लिया जा सकता है।

हमें दिन में कितनी बार खाना चाहिये? बहुत लोग तो दिन में केवल दो ही बार खाते हैं। सामान्यतः तीन बार खाने की प्रथा है–सबेरे काम पर बैठने से पहले, दोपहर को और शाम या रात्रि को। इससे अधिक बार खाने की आवश्यकता नहीं होती। शहरों में रहने वाले कुछ लोग समय–समय पर कुछ न कुछ खाते ही रहते हैं। यह आदत नुकसानदेय है। आमाशय को भी आखिर आराम चाहिये।

चाय, कॉफी और कोको पर गाँधी जी के विचार

'चाय, कॉफी और कोको इन तीनों में से एक की भी शरीर को आवश्यकता नहीं है। .... जैसी चाय सामान्यतः पी जाती है, उसका कोई गुण तो जानने में नहीं आया है। मगर उसमें एक भारी दोष होता है अर्थात् उसमें टेनीन होता है। टेनीन ऐसी चीज़ है, जो चमड़े को पकाने के काम में आती है। यही काम टेनीन वाली चाय आमाशय में जा कर करती है। आमाशय के भीतर टेनीन की तह चढ़ने से उसकी पाचन शक्ति कम होती है। इससे अपच होता है। ....जिन्हें चाय की आदत है, उन्हें समय पर चाय न मिले, तो वे व्याकुल हो जाते हैं। ....जो चाय के विषय में कहा गया है वह कॉफी में भी थोड़े बहुत प्रमाण में लागू होता है।'

आरोग्य की कुंजी पृष्ठ 18

गाँधी जी ने आगे कहा है–'जो राय मैंने चाय और कॉफी के बारे में दी है, वही कोको के बारे में भी है। जिसकी पाचन–क्रिया नियमित है, उसे चाय–कॉफी और कोको की मदद की आवश्यकता नहीं रहती। अपने लंबे अनुभव से मैं यह कह सकता हूँ कि तन्दुरुस्त मनुष्य को सामान्य खुराक से पूरा संतोष मिल जाता है। मैंने उपर्युक्त तीनों का खूब सेवन किया है। जब मैं ये चीजें लेता था तब शरीर में कुछ न कुछ बिगाड़ रहा ही करता था। इन चीज़ों के त्याग से मैंने कुछ भी खोया नहीं है, उल्टा बहुत पाया है। जो स्वाद मुझे चाय इत्यादि में मिलता था, उससे कहीं अधिक स्वाद अब मैं उबली हुई सामान्य भाजियों के रस में पाता हूँ।'

आरोग्य की कुंजी, पृष्ठ 19

हिंदी भाषा एक ऐसी सार्वजनिक भाषा है, जिसे बिना भेद–भाव प्रत्येक भारतीय ग्रहण कर सकता है।

मदन मोहन मालवीय